गेहूँ एवं जौ संदेश

वर्ष 5 | अंक 2 | जुलाई-दिसम्बर, 2016

उत्तर पूर्वी भारत में कटाई पूर्व बीज अंकुरण समस्या एवं अनुसंधान

चरण सिंह, अमित कुमार शर्मा, अरुण गुप्ता, ज्ञानेन्द्र सिंह एवं विनोद तिवारी

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

जलवायु के आधार पर भारत को 6 महत्त्वपूर्ण गेहूँ उत्पादन क्षेत्रों में विभाजित किया गया है और इनमें उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र के अन्तर्गत पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, असम, उड़ीसा एवं उत्तर पूर्वी राज्यों के मैदानी क्षेत्र आते हैं। उत्तर पूर्वी भारत में गेहूँ की उत्पादकता उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र की तुलना में काफी कम है। यह अंतर लगभग 1.5 टन प्रति हैक्टर है। इस अंतर को कम करके गेहूँ उत्पादन में एक अहम योगदान की उम्मीद की जा सकती है। उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्र में गेहूँ के उत्पादन को, कई जैविक एवं अजैविक समस्याएं प्रभावित करती हैं। जैविक समस्याओं में पर्ण झुलसा तथा भूरा रतुआ रोग एवं अजैविक समस्याओं में कटाई पूर्व अंकुरण (प्री हारवेस्ट स्प्राउटिंग) मुख्य हैं। कटाई पूर्व अंकुरण होने का मुख्यः कारण फसल पकते समय अत्यधिक वर्षा का होना है।

प्री हारवेस्ट स्प्राउटिंग क्या है?

गेहूँ के पकने के समय वर्षा का लगातार होना और गेहूँ के दानों का बाली में ही अंकुरित हो जाना किसान के लिए एक समस्या पैदा कर देता है। इस प्रकार की समस्या को कटाई पूर्व अंकुरण (प्री हारवेस्ट स्प्राउटिंग) के रुप में जाना जाता है। हालांकि गेहूँ लम्बे समय तक सुषुप्तावस्था में रह सकता है अगर यह कम तापमान व अधिक नमी के सम्पर्क में न आए। लगातार वर्षा एवं वातावरण में आर्द्रता के कारण गेहूँ का दाना बालियों में ही, जब पानी अवशोषित करके फूल जाता है तो उसमें अंकुरण शुरु होने लगता है, जिसके कारण दानों का भार कम हो जाता है और इससे दानों की उपयोगिता एवं गुणवत्ता प्रभावित हो जाती हैं जिसके फलस्वरुप किसान को भारी आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है।

प्रभावित क्षेत्र

इस समस्या से भारत के उत्तर पूर्वी क्षेत्र एवं सूदूर उत्तर पूर्वी क्षेत्र जैसे पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, असम, उड़ीसा, आसाम, मणीपुर, मेघालय, आदि राज्य अधिक ग्रसित हैं। यह समस्या उन क्षेत्रों में ज्यादा होती है जहाँ बेमौसमी अथवा मानसून से पूर्व वर्षा अधिक होती है और गेहूँ की पकाई के समय लगाातार वर्षा होती रहती है या नमी रहती है, जिस कारण गेहूँ के उत्पादन एवं दानों की गुणवत्ता तो प्रभावित होती ही है, साथ में किसान अपनी फसल का सही मूल्य प्राप्त नहीं कर पाते।

प्रभावित करने वाले कारक

अगर देखा जाए तो गेहूँ में बाली निकलने के 3–4 सप्ताह के अन्दर गेहूँ का दाना ज्यादा से ज्यादा आकार ग्रहण कर लेता है और उसके बाद जैसे–जैसे परिपक्वता आती है, दाने के भार में कमी आने लगती है। जबकि स्टार्ची एन्डोस्पर्म की कोशिकाएँ मर जाती हैं लेकिन भ्रूण जीवित एवं सुषुप्तावस्था में होता है। सामान्यतः यह सुषुप्तावस्था गेहूँ के दाने को बाली के अंदर रहते हुए अंकुरण न होने में सहायक है। सामान्यतः, गेहूँ का दाना अगर ठंडे वातावरण में है तो अधिक सुषुप्तावस्था दर्शाता है। गेहूँ के दाने के पकने के बाद की अवस्थाओं में अगर तापमान के साथ आर्द्रता (नमी) अधिक हो जाती है तो दाने में सुषुप्तावस्था काफी कम हो जाती है और दाने में अंकुरण हो जाता है। तापमान व नमी को इस समस्या के लिए मुख्य कारक के रुप में जाना जाता है, परन्तु तापमान व नमी के अलावा भी बहुत से कारक इस समस्या के लिए जिम्मेदार हैं जैसे कि बीज की सुषुप्तावस्था, दाने की पारगम्यता, आल्फा एमाईलेज क्रियाशीलता, हारमोन एवं जीन्स इत्यादि। जमाव के कारण गेहूँ में उपस्थित आल्फा एमाईलेज की क्रियाशीलता के कारण स्टार्च को शर्करा में बदल दिया जाता है और शर्करा को रेडीकल एवं कोलियोप्टाईल के द्वारा उपयोग कर लिया जाता है जिसके कारण गेहूँ के दाने के भार में कमी आ जाती है क्योंकि शर्करा ह्रास हो जाता है और स्टार्च का शर्करा में परिवर्तन गेहूँ की गुणवत्ता के लिए हानिकारक होता है, क्योंकि शर्करा, स्टार्च की अपेक्षा कम पानी थामे रखने की क्षमता रखती है जिसके कारण गैस कम ग्रहण होती है और परिणामस्वरुप चिपकने वाली ब्रेड बनती है जिसको पकड़ना बहुत मुश्किल हो

जाता है और गैस के बुलबुलों के कारण उसको काटना भी बहुत मुश्किल हो जाता है।

सुषुप्तावस्था एवं गेहूँ के दाने का रंग व अन्य कारक

सुषुप्तावस्था को हम आन्तरिक कारक के रुप में देखते हैं, जो अंकुरण रोकने लिए जिम्मेदार है, जबकि बीज आवरण की पारगम्यता जो कि प्रथम प्रतिरोधक दीवार के रुप में होती है और 'प्री हारवेस्ट स्प्राउटिंग' सहिष्णुता के लिए जिम्मेदार मानी जाती है। ऐसा भी माना जाता है कि लाल दाने वाली गेहूँ की अपेक्षा, सफेद दाने वाली गेहूँ में अंकुरण दर ज्यादा पाई जाती है यानी सुषुप्तावस्था कम होती है। आल्फा एमाईलेज भी एक मुख्य कारक के रुप में देखा गया है, जो कि गेहूँ के जमाव, ठंड सहिष्णुता एवं उत्पादन के लिए जिम्मेदार है। कुछ और आन्तरिक कारक जैसे जिबरेलिक अम्ल, एबसिसिक अम्ल एवं एनडोलएसिटिक अम्ल भी प्री हारवेस्ट स्प्राउटिंग समस्या का कारण हैं।

संस्थान में अनुसंधान कार्य

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल में कटाई पूर्व अंकुरण समस्या पर शोध कार्य किए जा रहे हैं। लगभग 1100 गेहूँ जननद्रव्यों पर जांच कार्य किया गया। परिपक्वता के समय, गेहूँ की बालियों को खेत में से काटकर –20 डिग्री सेल्सियस तापमान पर रखकर बाद में पॉलीहाऊस में कृत्रिम वर्षा द्वारा नमी उपलब्ध करवाकर जांच कार्य किया गया। इन लाईनों में सुषुप्तावस्था में काफी भिन्नता पाई गई। कुल 1100

लाईनों में से उत्तम सहिष्णुता वाली 110 लाईनों की पहचान की गई जिनमें सुषुप्तावस्था बाकी लाईनों की अपेक्षा अधिक पाई गई। अब प्रयोगशाला में फिर दोबारा से काँच की गोलाकार प्लेटों के माध्यम से सुषुप्तावस्था का जांच कार्य चल रहा है, तथा प्री–हारवेस्ट स्प्राउटिंग के लिए पूर्ण सहिष्णु लाईनों के मिलने की उम्मीद है। अंकुरण सूचकांक परीक्षण से, 4 लाईनों में अंकुरण सूचकांक 0.2 से कम, 13 लाईनों में 0.2 से 0.4 के मध्य और 162 लाईनों में अंकुरण सूचकांक 0.4 से अधिक पाया गया। इन लाईनों को बाद में जैव प्रौद्योगिकी की सूचक (मार्कर) तकनीक के द्वारा जांच करने के बाद, जो लाईनें इस गुण के लिए प्रभावी होंगी उनको दाता के रुप में प्रयोग करके, इस गुण को अधिक पैदावार देने वाली नई किस्मों में स्थानांतरित किया जाएगा। इस तरह से प्रभावित क्षेत्रों में 'प्री हारवेस्ट स्प्राउटिंग' सहिष्णुता के लिए गेहूँ की किस्म विकसित की जाएगी।

जिम्मेदार आनुवंशिक कारक

इस दिशा में अनुसंधान कार्यों के फलस्वरुप अभी एक वीवीपेरस जरायुता (वी.पी.1) जीन का पता लगाया गया है, जो बीज का अंकुरण व बीज की सुषुप्तावस्था के लिए जिम्मेदार माना गया है। 'प्री हारवेस्ट स्प्राउटिंग' एक मात्रात्मक गुण है जो कई जीनों के द्वारा नियंत्रित है जिनमें से वी.पी.1 जीन को मुख्य जीन के रुप में पाया गया है जो बीज अंकुरण एवं सुषुप्तावस्था को विनियमित करता है। इसके अलावा कुछ और जीन भी भ्रुण परिपक्वता, बीज सुषुप्तावस्था और अंकुरण को वी.पी.1 जीन के सहयोग से नियंत्रित करते हैं।

सारांश

गेहूँ में कटाई पूर्व अंकुरण बेमौसमी या मानसून पूर्व अधिक वर्षा होने वाले क्षेत्रों के लिए एक जटिल समस्या है, जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम से यह पता चला है कि 'प्री–हारवेस्ट स्प्राउटिंग' के लिए कई जीन उत्तरदायी हैं। निरंतर शोध प्रयासों से, भविष्य में इस समस्या से मुक्ति पाने की संभावना है। सम्बन्धित जीनों की पहचान कर, इनको अधिक उपजाऊवान किस्मों में स्थानान्तरित करके ही इस समस्या का निदान सम्भव है। इन जीनों के आधार पर हमने, प्रभावित क्षेत्रों की पुरानी प्रचलित किस्मों पर अध्ययन कर, उन लाईनों की पहचान की जो कि कटाई पूर्व अंकुरण समस्या के लिए सहिष्णु हैं। इन सहिष्णु किस्मों से कटाई पूर्व अंकुरण के लिए उत्तरदायी जीन को प्रजनन तकनीक द्वारा अधिक ऊपज वाली किस्मों में स्थानान्तरित कर, प्रभावित क्षेत्रों के लिए नई अधिक ऊपज देने वाली किस्मों का विकास कर सकते हैं, इस तरह से, हम गेहूँ की सुषुप्तावस्था को एक स्तर तक बढ़ाकर, वर्षा प्रभावित उत्तर पूर्वी राज्यों में इसके फलस्वरुप दूसरी हरित क्रांति की उम्मीद कर सकते हैं।

मृदा के सूक्ष्मजीव विभिन्न प्रकार के तनावों को कम करने में सक्षम

प्रियंका चंद्रा, पूनम जसरोटिया, सुभाष कटारे, सुधीर कुमार एवं डी. पी. सिंह

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

सम्पूर्ण विश्व में बढ़ती हुई जनसंख्या एक गम्भीर समस्या है। बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ भोजन की आपूर्ति के लिए मानव खाद्य उत्पादन की बढ़ोत्तरी के लिए तरह–तरह के रसायनिक उर्वरकों एवं जहरीले कीटनाशकों के उपयोग से प्रकृति के जैविक और अजैविक तत्वों के बीच आदान–प्रदान के चक्र (इकोलॉजी सिस्टम) को प्रभावित कर रहा है। जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति खराब हो रही है, साथ ही वातावरण भी प्रदूषित होता है। मनुष्य की बढ़ती महत्वाकांक्षा के चलते बढ़ते औद्योगिकरण एवं बढ़ते वाहनों की संख्या से ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन में इजाफा हुआ है। जिससे तापमान वृद्धि और बरसात के दिनों में कमी आई है। इन सब कारणों से विभिन्न अजैविक तनाव जैसे सूखा तथा लवणता आदि से पौधे प्रभावित हो रहे हैं जिसके कारण फसल उत्पादकता में कमी आ रही है। हाल के अध्ययनों से पता चलता है कि 'वनस्पति–सूक्ष्मजीव–मिट्टी' के बीच एक त्रिकोणीय परस्पर क्रिया होती है जो तरह तरह के तनाव को सुधारने में सक्षम है। सूक्ष्मजीव विभिन्न प्रकार के तनावों के खिलाफ, पौधों की सहनशीलता बढ़ाने में मदद करते हैं और साथ ही पौधों के विकास को बढ़ाने में सक्षम हैं। जिन सूक्ष्मजीवों में पौधों के विकास को बढ़ाने की क्षमता है उनको

प्लांट ग्रोथ प्रोमोटिंग राइजोबैक्टिरीया (पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करने वाले राइजोबैक्टिरीया) कहते हैं। ये सूक्ष्मजीव पौधों की जड़ों के आस–पास पाए जाते हैं तथा पौधों के लिए अत्यंत लाभकारी हैं। याँग एवं अन्य ने 2008 में 'इन्ड्यूसड सिस्टेमिक टॉलरेंस' को परिभाषित करते हुए बताया था की प्लांट ग्रोथ प्रोमोटिंग राइजोबैक्टिरीया पौधों में ऐसे रसायनिक तथा भौतिक परिवर्तन लाते हैं जिसके परिणामस्वरुप पौधे अजैविक तनावों से प्रतिरक्षित हो जाते हैं।

निम्न क्रिया विधि से प्लांट ग्रोथ प्रोमोटिंग राइजोबैक्टिरिया तनाव के प्रभाव को कम करता है

साईटोकाइनिन की उत्पत्ति से पत्तियों में ऐबीसिसिक एसिड का संचय होता है जिसके कारण रंध्र बंद हो जाती हैं। प्लांट ग्रोथ प्रोमोटिंग राइजोबैक्टिरीया के एंटीऑक्सीडेंट एन्ज्याइम्स, रिएक्टिव ऑक्सीजन स्पीशीज को प्रभावहीन करते हैं तथा पादप कोशिकाओं में इसके विषाक्त प्रभाव को कम करते हैं।

प्लांट ग्रोथ प्रोमोटिंग राइजोबैक्टिरीया का उत्पादन एथलीन के प्रीकर्सर को घटाता है जिसके कारण एथलीन की मात्रा कम होती है और पौधों में तनाव के प्रति सहनशीलता बढ़ती है। प्लांट ग्रोथ प्रोमोटिंग राइजोबैक्टिरीया सोडियम आयन के उदग्रहण में कमी लाता है। ऑस्मोप्रोटेक्टेंस का संचय कम करता है । प्लांट ग्रोथ प्रोमोटिंग राइजोबैक्टिरीया, मेम्ब्रेन इंटीग्रिटी और पौधों के विकास को बढ़ावा देता है।

तालिकाः निम्नलिखित सूक्ष्मजीव विभिन्न प्रकार के तनाव को कम करने में सक्षम हैं

क्र.सं.	सूक्ष्मजीव	फसल	तनाव के प्रकार	क्रियाविधि
1	पैनटायो एग्लोमेरांस	गेहूँ	सूखा	बायोफिल्म बनाता है।
2	पैनीबैसीलस पोलीमैक्सा	ऐराबिडोपसिस	सूखा	तनाव प्रतिरोधी जीन (इ आर डी 15) को उत्तेजित करता है।
3	राइजोबियम	सूरजमुखी	सूखा	बायोफिल्म बनाता है।
4	सूडोमोनास पुतिडा, एन्टेरोबैक्टेर	टमाटर	बाढ़	ए सी सी डीमिनेज की उत्पत्ति करता है।
5	सूडोमोनास पुतिडा	काबुली चना	धातु विषाक्तता	धातु आयनों का अधिग्रहण करता है।
6	एजोस्पाइरिलम	गेहूँ	सूखा	पानी का उन्नत उद्दग्रहण करता है।
7	एक्रोमोबैक्टेर पाइचौडी	टमाटर	सूखा	ए सी सी डीमिनेज की उत्पति करता है।
8	वारिओवोरैक्स पैराडोक्सिस	मटर	सूखा	ए सी सी डीमिनेज की उत्पति करता है
9	पिरिफोर्मस्पोरा इंडिका	जौ	लवणता	एंटीऑक्सीडेंट एन्जाईम की उत्पत्ति करता है।
10	माइकोराइजा	चारा	सूखा, लवणता	पानी का उन्नत उदग्रहण करता है।
11	बैसीलस ऐमाइलो–लिक्यूफेकीन्स	गेहूँ	लवणता	कोशिकाओं में सोडियम आयन (Na^+) के प्रवेश को रोकता है।
12	साइटोनेमा	धान	लवणता	जिब्रीलीक एसिड़ तथा इंडोल एसिटीक एसिड़ तथा प्रोलीन की उत्पति करता है।
13	बरखोलड्रोरिया फाइटोफरमैन्स	अंगूर	कम तापमान	ए सी सी डीमिनेज की उत्पत्ति करता है।
14	मैथाइलोबैक्टीरीयम, बरखोलड्रोरिया	टमाटर	कैडमियम विषाक्तता	विषाक्त आयन उदग्रहण में कमी करता है तथा उनका स्थानान्तरण करता है।
15	सूडोमोनास फ्लुरोसेन्स	मूंगफली	लवणता	ए सी सी डीमिनेज की उत्पति करता है।
16	सूडोमोनास	कैनोला	कम तापमान	ए सी सी डीमिनेज की उत्पति करता है।
17	बैसीलस पोलीक्स्मा	बाकला	सूखा	रंध्र को बंद करता है।
18	सूडोमोनास	मटर	सूखा	एथलीन की मात्रा को कम करता है।
19	सूडोमोनास मेंडोसिना तथा ग्लोमस	सलाद पत्ता	सूखा	एंटीऑक्सीडेंट एन्ज्याइम्स की उत्पत्ति करता है।
20	सूडोमोनास	ज्वार	उच्च तापमान	हीट शॉक प्रोटीन का उत्पादन करता है।
21	सूडोमोनास पुतिडा	सूरजमुखी	सूखा	इंडोल एसिटीक एसिड तथा प्रोलीन की उत्पत्ति करता है।

गेहूँ में जैव पुष्टिकरण

वनिता पाण्डेय, स्नेह नरवाल, सेवा राम, रिंकी, सेंदिल कुमार क. मु, अंकिता झा एवं आर. के. गुप्ता

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

मानव शरीर की सही बढ़ोत्तरी एवं तंदुरूस्ती, सही पोषक तत्वों के संतुलित ग्रहण पर निर्भर करती है। खनिज पदार्थों की वैसे तो बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है परन्तु ये पाचन क्रिया में विशेष भूमिका निभाते हैं। ज्यादातर खनिजों की प्रतिपूर्ति संतुलित भोजन (अनाज, सब्जियाँ एवं फलों) से हो जाती है। परन्तु अनाज पर निर्भर जनसंख्या में कुछ खनिजों जैसे लौह, जस्ता, कैल्शियम, तांबा आदि की कमी हो जाती है। लौह तथा जस्ते की कमी के कारण असामान्य दिमागी व शारीरिक विकास, हड्डियों में असमानता तथा महिलाओं में गर्भपात की समस्या उत्पन्न हो सकती है। विकासशील देशों में खनिजों की शरीर में कमी से हुई मौतों में निरंतर वृद्धि होती जा रही है जिसमें लौह और जस्ते की कमी प्रमुख कारण है। पारम्परिक विधियों के अनुसार भोजन में विविधता, खाद्य सुदृढ़ीकरण एवं परिपूरकों (गोलियाँ एवं सीरप) के उपयोग से खनिज कुपोषण में कमी लाई जा सकती है। गेहूँ, विकासशील देशों की मुख्य खाद्य फसलों में से एक है तथा दैनिक ऊर्जा प्रदान करने में गेहूँ का प्रमुख योगदान है। इसलिए गेहूँ की रचना और पोषक तत्वों की गुणवत्ता का मानव स्वास्थ्य पर महत्वपूर्ण प्रभाव है। जैव पुष्टिकरण की प्रक्रिया के द्वारा गेहूँ में खनिज पदार्थों की जैव उपलब्धता को बढ़ाया जा सकता है। जैव पुष्टिकरण (बॉयोफोर्टीफिकेशन) की प्रक्रिया में पौधे के खाए जाने वाले जरूरी भागों में सस्यक्रियाओं या आनुवंशिक तरीकों से खनिज तत्वों की सांद्रता एवं जैव उपलब्धता को बढ़ाया जा सकता है।

जैव पुष्टिकरण

- अनाज में खनिज तत्वों की सांद्रता को बढ़ाना।
- जैव उपलब्धता को बढ़ावा देने वाले पोषक तत्वों एवं यौगिकों के स्तर में बढ़ोत्तरी।
- खाद्य पदार्थों में जैव उपलब्धता को कम करने वाले एंटीन्यूट्रीएंट्स के स्तर को कम करना।

आनुवंशिक पुष्टिकरण

पारम्परिक प्रजनन तथा ट्रांसजेनिक विधियों का उपयोग करके फसल की किस्मों में खनिज आर्द्रता बढ़ाई जा सकती है। इस प्रक्रिया में प्रारम्भिक अनुसंधान तथा निवेश से लम्बे समय तक लाभ उठाया जा सकता है। वर्तमान शोध से यह ज्ञात हुआ है कि आधुनिक गेहूँ के पूरक प्रकृतिकृत सम्बंधी (wild relatives) तथा सिंथेटिक हैग्ज़ाप्लाएड जनक (hexaploid progentors) में लौह तथा जस्ते की सांद्रता में व्यापक भिन्नता होती है। लक्षित प्रजनन द्वारा इस आनुवंशिक विभिन्नता का उपयोग करके नई अधिक जैव उपलब्धता वाली किस्में बनाई जा रही हैं। इन किस्मों में अच्छी उपज के साथ वातावरण के अनुकूल अच्छा एग्रोनॉमिक प्रदर्शन देखा गया है। आनुवंशिक जैव पुष्टिकरण में उर्वरक का उपयोग करके अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

आनुवंशिक बॉयोफॉरटिफिकेशन का एक अन्य पहलू गेहूँ में एंटीन्यूट्रीएंट्स जैसे फाइटिक एसिड की कमी करना है। फाइटिक एसिड सूक्ष्म पोषक तत्वों की जैव उपलब्धता कम करने की शक्ति रखता है। इसलिए फाइटिक एसिड को खत्म करने वाले जीन की वृद्धि या फिर इसके जैव संश्लेषण में शामिल जीन के प्रभाव को घटाकर पोषक तत्वों के स्तर में वृद्धि की जा सकती है।

सस्यक्रियाओं द्वारा जैव पुष्टिकरण

इस प्रक्रिया में सूक्ष्म पोषक तत्वों को उर्वरक के द्वारा सीधे

मिट्टी या फिर स्प्रे द्वारा पत्तियों पर डाला जाता है। लौह संवर्धन के लिए स्प्रे सबसे प्रभावशाली प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया द्वारा गेहूँ तथा धान दोनों में लौह को बढ़ाया जा सकता है तथा जस्ते की सांद्रता बढ़ाने के लिए जस्ते के उर्वरक का उपयोग प्रभावशाली माना जाता है। नाईट्रोजन तत्व का भी पौधों तथा अनाज के पोषण की स्थिति पर एक सकारात्मक प्रभाव है। परन्तु एग्रोनॉमिक पुष्टिकरण को पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाने का एक अल्पकालीन उपाय ही माना जाता है और मुख्यतः आनुवंशिक बॉयोफोर्टिफिकेशन के पूरक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इन सभी पहलुओं पर भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल में कई परियोजनाएं चल रही हैं, जो काफी प्रभावी भी साबित होंगी। हाल ही में संस्थान द्वारा जस्ते की अधिक सांद्रता वाली गेहूँ की किस्म डब्ल्यूबी 2 की पहचान की गई है। उपर्युक्त तकनीकों का उपयोग करके लौह तथा जस्ते के कुपोषण को घटाया जा सकता है जो कि समय की माँग भी है।

सुरक्षित अन्न भंडारण : समस्या, उपाय एवं प्रबंधन

रिंकी, प्रियंका चंद्रा, वनिता पाण्डेय एवं पंकज कुमार

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

अन्न उत्पादन में भारत एक अग्रणी देश है। हरित क्रांति के पश्चात् आई उत्पादन वृद्धि की बाढ़ ने हमें न केवल अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम बनाया अपितु निर्यात के क्षेत्र में भी हमें अद्वितीय पहचान दिलाई है। इतना प्रगतिशील होने के पश्चात् भी हमारे देश में अधिकांश अन्न का सुरक्षित भंडारण एक बहुत बड़ी चुनौती है। हालांकि अनाज का भंडारण, भारत का किसान, सदियों से करता चला आ रहा है। किन्तु फिर भी लाखों टन अनाज हर वर्ष खराब हो जाता है। अन्न भंडारण की प्रक्रिया कटाई के साथ ही शुरू हो जाती है। क्योंकि कटाई के लिए उपयोग में लाए गए यंत्र, वातावरण की परिस्थितियां (आर्द्रता एवं तापमान), प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अन्न के सुरक्षित भंडारण में अहम् भूमिका निभाते हैं। भंडारण की सुरक्षा एवं गुणवत्ता को हानि पहुँचाने वाले कारकों में सबसे प्रमुख है कीड़ों का प्रकोप। ये कीड़े बीज व मृदा के अतिरिक्त, गहाई या ढलाई में प्रयुक्त यंत्रों द्वारा भी भंडारण तक पहुँच सकते हैं।

सुरक्षित अन्न भंडारण हेतु ध्यान देने योग्य कुछ प्राथमिक कदम

1 भंडारण के लिए अन्न में नमी की मात्रा 8–10% होनी चाहिए, क्योंकि अधिक आर्द्रता वाले बीजों में श्वसन प्रक्रिया बढ़ने के कारण कीटों के साथ साथ फफूंद का आक्रमण भी बढ़ जाता है।

2 अन्न को सामान्य तापमान पर अच्छी तरह सुखा कर ही भंडारित करें, क्योंकि, अधिक तापमान बीजों की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव डालता है।

3 भंडारित अन्न को लाल सुरी, खपरा बीटल, घुन इत्यादि से सुरक्षित रखना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि ये अन्न को अधिक हानि पहुंचाते हैं।

4 फसल कटाई के लिए संक्रमण मुक्त यंत्रों एवं साधनों का प्रयोग करें ।

5 कभी भी पुरानी बोरियों या कुठला इत्यादि को बिना उपचारित किए भंडारण के लिए उपयोग न करें। यदि सम्भव हो तो नई बोरियों का इस्तेमाल करें ।

6 अन्न भंडारण वाले कमरे को डी.डी.वी.पी. (40 मी.ली.), मेलाथिऑन (40 मी.ली.) या डेल्टामेथ्रिन (40 ग्राम) से उपचारित करने के पश्चात ही उपयोग करें ।

7 नमी के प्रभाव को खत्म करने के लिए अन्न की बोरियों को लकड़ी के फट्टों या पोलोथिन की चादर पर ही रखें।

8 भंडारण करने से पहले अन्न की जाँच कर लें ताकि कीड़ों की उपस्थिति का पता लगाया जा सके, यानि पहले ही अन्न में कीड़ा लगा हो तो एल्यूमिनियम फॉस्फाइड (3 गोली प्रति 10 कुंतल बीज) से प्रधुमित करें।

9 प्रधुमन के समय उच्च गुणवत्ता वाला वायु रोधी कवर, बहुसतही कवर, मल्टी क्रॉस लैमिनेटेड कवर ही इस्तेमाल करें।

10 पुराने अन्न को नए भंडारित अन्न के साथ कदापि न रखें।

11 यदि कुठले या बिन में भंडारण करना हो तो नीम की सूखी पत्तियों द्वारा प्रधुमित करना भी एक असरदार युक्ति है। किंतु भंडारण के पश्चात् पात्र का मुंह बंद करके उसे वायु अवरोधी बनाना अत्यंत आवश्यक है।

12 भंडारण के लिए प्रयोग किए जाने वाले गोदाम, पात्र या वायु रोधी कवर में किसी भी प्रकार की दरार या छेद को भंडारण से पूर्व ही बंद कर लें ताकि संक्रमण से बचा जा सके।

13 चूहों के नियंत्रण के लिए एल्युमिनियम फॉस्फाइड, चूहे दानी या एंटी कगुलेंट्स का प्रयोग करें।

गेहूँ में अन्तस्थ उष्ण तनाव को कम करने के लिए विकल्प के रूप में सेलिसिलिक अम्ल का बाहरी उपयोग

मामुथा एच.एम, पंकज कुमार सिंह, राकेश कुमार, कर्णम वेंकटेश एवं अशोक कुमार

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

अजैविक तनाव की स्थिति में पादप वृद्धि हार्मोन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। एक जीनोटाईप (जीनप्रारूप) में हार्मोन संकेतन में क्रॉस–टाक विभिन्न आदानों में एकीकृत और तनाव में प्रतिक्रिया करने की क्षमता को दर्शाता है। हार्मोनल होमोयोस्टेटिस स्थायित्व, तृप्त, जैव संश्लेषण एवं परिपूरक ताप को तनाव में परिवर्तित कर सकता है। कई अनुसंधानिक रचनाओं के अध्ययन में पाया गया है कि विभिन्न पी.जी.आर. के उष्ण को कम करने का प्रभाव विभिन्न फसलों पर भिन्न–भिन्न होता है। इसलिए यह एक प्रयास किया गया है कि पी.जी.आर. का यह प्रभाव गेहूँ में अन्तस्थ ताप प्रभाव में भी मान्य हो।

इस वर्तमान अध्ययन में तीन विभिन्न वृद्धि नियामक जैसे ऑक्जीन (इंडॉल एसिटिक एसिड, 10^{-4} एम), साइटोकाइनिन (बी.एस.पी., 10^{-4} एम) एवं जिबरेलिक एसिड (जी.ए.$_3$, 10^{-5} एम) एवं साथ में एक वृद्धि उद्दीपक पदार्थ सेलिसिलिक अम्ल (चिरायता अम्ल) का दो विभिन्न वृद्धि अवस्था एक जी.एस. 45 (बुट स्वैलन, पुष्पन से पहले) और दूसरा जी.एस. 75 (मध्यम दुग्ध अवस्था, पुष्पन के पश्चात्) जेडोक पैमाने के अनुसार, छिड़काव किया गया। छिड़काव कार्य, गेहूँ के दस विभिन्न जीनोटाईप (डी.बी.डब्ल्यू. 17, एच.डी. 2932, एच.यू.डब्ल्यू. 468, पी.बी.डब्ल्यू. 343, राज 3765, राज 4014, यू.पी. 2425, डब्ल्यू.एच. 147, डब्ल्यू. एच. 730) पर देर से की गई बिजाई की अवस्था में किया गया।

आंकड़ों के विश्लेषण के लिए प्रोक्स जी.एल.एम., एस.ए.एस. विभिन्न उपचार को दर्शाता है का इस्तेमाल किया गया। सेलिसिलिक अम्ल का छिड़काव कुल अनाज उपज एवं उपज/स्पाईक में महत्वपूर्ण वृद्धि को दर्शाता है, तत्पश्चात् इंडॉल एसिटिक एसिड, बी.ए.पी. जी.ए. 3 एवं नियंत्रित उपचार के तहत पॉट में किए गए प्रयोग को दर्शाता है।

बड़े भूखंडों में परिणाम के सत्यापन का कार्य अभी प्रगति पर है। इस प्रकार प्रारम्भिक अध्ययनों से पता चला है कि सेलिसिलिक अम्ल का छिड़काव गेहूँ में अन्तस्थ उष्ण तनाव को कम करने के लिए सम्भावित विकल्प के रूप में माना जा सकता है।

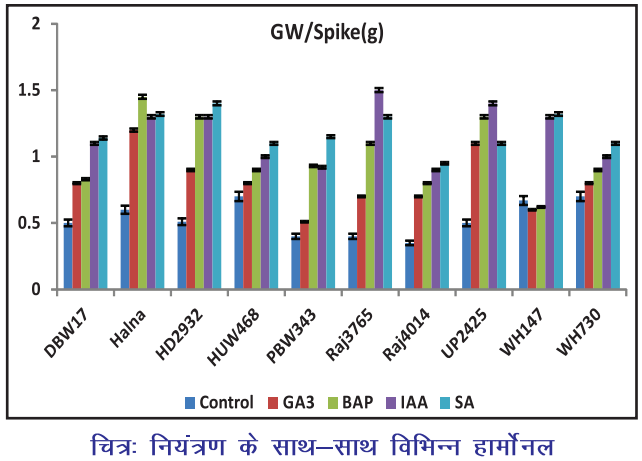

चित्रः नियंत्रण के साथ–साथ विभिन्न हार्मोनल उपचार में अनाज भार/बाली का अवलोकन

मृदा परीक्षण कितना आवश्यक

अनिता मीणा, सत्यवीर सिंह, अनुज कुमार, अजय वर्मा, सेंधिल आर., एवं प्रियंका चन्द्रा
भा.कृ.अनु.प.– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

हरित क्रांति की वजह से अनाज के उत्पादन में कई गुना वृद्धि हुई है। सिंचाई, भूमि व उर्वरक हरित क्रांति के दौरान उत्पादन बढ़ोत्तरी के लिए मुख्य कारक सिद्ध हुए हैं। हरित क्रांति में इस मुकाम पर हम उन्नत बीज, सिंचाई, तकनीकी सुधारों के अलावा उर्वरकों के प्रयोग से ही पहुँच पाए हैं। किंतु इन परिस्थितियों में मृदा स्वास्थ्य को ध्यान में न रखते हुए मृदा की उर्वरता और जीवांश पदार्थों का लगातार दोहन किया गया जिसकी वजह से मृदा की गुणवत्ता कम होने के साथ–साथ अच्छी गुणवत्ता वाला सिंचाई जल व पीने वाला पानी भी घटता जा रहा है।

फलस्वरुप उत्पादकता में कमी, मृदा में कार्बनिक पदार्थों की कमी, मृदा में बहु आयामी पोषक तत्वों की कमी, निवेश उपयोग क्षमता में कमी, असंतुलित उर्वरकों का प्रयोग, संरक्षित कृषि का अभाव, धान–गेहूँ फसल–चक्र का बाहुल्य, शस्य क्षेत्रों के लिए उत्पादक तकनीकी के प्रचार–प्रसार में कमी इत्यादि कृषि के लिए चिंतनीय विषय हैं।

आज हमारा उद्देश्य यह होना चाहिए कि मृदा का स्वास्थ्य लम्बे अरसे तक अच्छा बना रहे जिससे आने वाले वर्षों तक हम अच्छी उत्पादकता ले सकें। फसल अच्छी बढ़वार व भरपूर उत्पादन के लिए जमीन से अपनी खुराक के रुप में 16 पोषक तत्व लेती है जिनमें 3 पोषक तत्व हवा तथा जल से मिल जाते हैं। भूमि में इन पोषक तत्वों की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध होनी चाहिए। इन सभी पोषक तत्वों में से एक भी पोषक तत्व की अधिकता या कमी हो जाए तो फसलों की खुराक असंतुलित हो जाती है। इसलिए इन सभी आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति के लिए समानुपातिक मात्रा में उर्वरक डालने की आवश्यकता पड़ती है।

इस प्रकार भूमि में पोषक तत्वों की आपूर्ति करके खुराक को संतुलित करना अति आवश्यक है। अतः मृदा का स्वास्थ्य लम्बे अरसे तक अच्छा बनाए रखने के लिए अति आवश्यक है कि हम समय–समय पर मृदा का परीक्षण करवाएं व मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का समुचित प्रयोग करें जिससे टिकाऊ उत्पादकता प्राप्त की जा सके।

मृदा परीक्षण के लिए नमूना लेने की विधि

- जिस खेत का मृदा नमूना लेना हो उसमें 10 स्थानों पर यदृच्छिकी या जिटा जैंक विधि से निशान बना लेते हैं।
- प्रत्येक निशान वाली जगह की ऊपरी सतह से घास–फूस, कंकड़–पत्थर आदि को साफ कर लें।
- निर्धारित स्थान पर खुरपी या फावड़े से 15 सेंटीमीटर गहरा गड्ढा बना लेते हैं।
- खुरपी की सहायता से गड्ढे की दीवार से लगभग 1 सेंटीमीटर मोटी मिट्टी की परत निकाल लेते हैं।
- इस मिट्टी को साफ–सुथरे तसले या ट्रे में रख लेते हैं।
- इसी प्रकार खेत के बाकी 9 निशानों से मिट्टी के नमूने निकाल लेते हैं। इन सभी नमूनों को आपस में अच्छी तरह से मिला लेते हैं।
- यदि इस मिट्टी की मात्रा 750 ग्राम से ज्यादा हो तो उसको चार भागों में बांट लेते हैं। इसके आमने–सामने के भागों को फेंक देते हैं। बाकी दो भागों को आपस में मिला लेते हैं।
- इस प्रक्रिया को तब तक दोहराते हैं जब तक की मिट्टी का नमूना 750 ग्राम से 1 किलोग्राम के बीच में रह जाए।
- अब इस मिट्टी को साफ–सुथरे पॉलीथीन में भर लेते हैं। इसमें लेबल लगा देते हैं।

लेबल पर निम्नलिखित सूचनाएं होनी चाहिए

- किसान का नाम
- गाँव का नाम
- ब्लॉक का नाम

- खेत का नाम / नम्बर
- मृदा नमूना लेने से पहले की फसल
- मृदा नमूना लेने के बाद की फसल
- भूमि की कोई समस्या हो तो लिखें

इस नमूने को हम मिट्टी परीक्षण के लिए प्रयोगशाला में भेज सकते हैं।

मृदा नमूना लेने की गहराई

- गेहूँ, ज्वार, धान, सोयाबीन, मटर, चना आदि फसलों के लिए 15–20 से.मी. तक गहराई से मृदा नमूना लेना चाहिए।
- गहरी जल वाली फसलें (कपास–अरहर) आदि में 25–30 सेंटीमीटर गहराई तक मृदा नमूना लें।
- संतरा–नीम्बू आदि बगीचों के मिट्टी परीक्षण के लिए, मृदा का प्रोफाइल नमूना लेना चाहिए। तीसरी गहराई 90X60X150 सेंटीमीटर गहरा गड्ढा खोदकर नमूना लेना चाहिए।

मृदा नमूना लेते समय सावधानियां

- खाद के ढेर, खेत की मेंड़ या सिंचाई की नाली के पास से मिट्टी का नमूना नहीं लेना चाहिए।
- खाद व उर्वरक डालने के पश्चात् मृदा का नमूना नहीं लेना चाहिए।
- खेत में किसी पेड़ के जड़ क्षेत्र से मृदा का नमूना नहीं लेना चाहिए।
- अलग–अलग खेत का नमूना अलग–अलग बनाए रखें।
- ज्यादा नमी की अवस्था में मृदा का नमूना न निकालें।
- मिट्टी को छाया में सुखाना चाहिए एवं साफ पोलीथीन में भरें।
- घास–फूस एवं पौधों की जड़ों को साफ कर लेना चाहिए।

मृदा परीक्षण के लाभ

- मिट्टी की उर्वरता का ज्ञान होना
- मिट्टी की उर्वरता व फसल के अनुसार खाद व उर्वरक की अनुशंसित मात्रा का निर्धारण करना।
- समस्या ग्रसित मृदाओं का सही समय पर उपचार करना।
- उर्वरकों की उपयोग क्षमता को बढ़ाना।
- फसल की उत्पादकता में वृद्धि करना।
- फसलों में पोषक तत्वों की कमी से होने वाली बिमारियों से बचाव।

मृदा परीक्षण हेतु करनाल में संस्थान

- मृदा विभाग, चौ. चरण सिंह कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रिय केंद्र, करनाल
- कृषि विभाग, करनाल

मृदा परीक्षण हेतु खेत नमूना लेने की विधि

- भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल

निम्न पैरामीटर मृदा जाँच के लिए आवश्यक हैं

- पीएच, ईसी, जैविक कार्बन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाशियम, सल्फर, जिंक, बोरॉन, आयरन, मैंग्निज एवं कॉपर।

उपरोक्त पैरामीटर की जांच अच्छी फसल उपज के लिए बहुत आवश्यक है।

जैविक खेती में सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण तकनीक

प्रियंका चन्द्रा, अनिता मीणा, पूनम जसरोटिया, अंकिता झा एवं रिंकी

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण तकनीक में अनेक प्रकार के मित्र सूक्ष्म जीवों का मिश्रण होता है। जो की विभिन्न क्रिया कलापों जैसे कृषि में सफल बढ़वार, कम्पोस्ट बनाने हेतु, जल उपचार इत्यादि हेतु प्रयोग किया जाता है। इस तकनीक को विकसित करने का मुख्य ध्येय था कि विभिन्न सूक्ष्म जीवों को मिलाकर एक ऐसे जैविक उत्पाद का निर्माण किया जाए जिससे मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाया जा सके, भूमि में विद्यमान जैव–अवशिष्ट को जल्दी सड़ाया जा सके और रासायनिक खादों पर फसलों की निर्भरता कम की जा सके।

सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण (Microbial Consortium) क्या है?

सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण प्रकृति में उपलब्ध अनेक प्रकार के प्रभावी मित्र सूक्ष्म जीवों का मिश्रण है। इन सूक्ष्म जीवों में प्रमुख है, नत्रजन स्थिरीकारक, फास्फेट घोलक, प्रकाश संश्लेषीय जीवाणु तथा अन्य कई प्रकार के फफूंद व एक्टिनोमाईसिटीज। इस मिश्रण में प्रत्येक जीवाणु का अपना एक विशिष्ट स्थान है, जो विभिन्न तत्व–चक्रों को सुचारू रूप से चलाने, मृदा स्वास्थ्य एवं उर्वरता में सुधार तथा पौध संरक्षण में सहायता करते हैं।

सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण जैव उर्वरकों से अलग कैसे हैं

हालांकि सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण के जीवाणु को जैव उर्वरकों के रूप में प्रयोग किया जाता है। परंतु जहाँ प्रत्येक जैव उर्वरक में केवल एक या एक ही प्रकार के जीवाणुओं का प्रयोग किया जाता है वहीं सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण में एक ही उत्पाद में अनेक प्रकार के विभिन्न क्रियाकलाप करने वाले जीवाणु होते हैं।

सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण के प्रयोग से लाभ

- सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण से उपचार करने पर अंकुरण में सुधार होता है। पौधे जल्दी निकलते हैं तथा पौधों में फूल व फल जल्दी आते हैं और फल व दाने जल्दी पकते हैं।
- प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में वृद्धि होती है।
- कीट प्रकोप सहने की क्षमता बढ़ जाती है।
- मिट्टी के भौतिक, रसायनिक व जैविक गुणों में सुधार होता है।
- एक दूसरे पर आधारित जीवन प्रक्रिया के कारण मिट्टी में सूक्ष्म जीवों की अच्छी बढ़वार होती है। इसके प्रयोग से वैम फफूंद का जड़ों पर फैलाव तथा पौधों की जल व पोषक तत्व उदग्रहण करने की क्षमता बढ़ जाती है।
- जैव अवशिष्ट के तीव्र सड़न में सहायक है। फसल अवशिष्ट को सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण से उपचारित करके सीधे प्रयोग करने से, कम्पोस्ट जितना ही फायदा होता है तथा कम्पोस्ट बनाने की आवश्यकता नहीं रहती है।
- सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण के प्रयोग से मिट्टी में केंचुओं व अन्य मित्र जीवों की संख्या बढ़ती है और मिट्टी स्वस्थ व भुरभुरी बनती है।
- जैव उर्वरकों में एक ही प्रकार के जीवाणु होते हैं, जिनकी मात्रा 1–10 करोड़ प्रति ग्राम होती है। तथा सूक्ष्म जीवाणु सम्मिश्रण में विभिन्न प्रकार के जीवाणु होते हैं जिनकी मात्रा 1 करोड़ प्रतिग्राम होती है।

कृषि में नीम का उपयोग

अनिता मीणा, सत्यवीर सिंह, अनुज कुमार, प्रियंका चंद्रा, रिंकी एवं वनिता पाण्डेय

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

भारत भूमि में पैदा होने वाला मंगलकारी एवं सर्वव्याधि निवारक बहुपयोगी वृक्ष नीम भारत की ग्रामीण सभ्यता एवं संस्कृति की पहचान बन चुका है। नीम ग्रामीण समाज में इस कदर रच बस गया है कि हमारे प्रतिदिन के कार्य–कलाप इसके बगैर कल्पना के बाहर हैं।

नीम का सामान्य विवरण

नीम 40 से 50 फीट ऊँचा शीतल छायादार वृक्ष है। नीम की छाल स्थूल खुरदरी तथा तिरछी लम्बी धारियों से युक्त होती है। नीम की छाल बाहर से भूरी परंतु अंदर से लाल रंग की होती है। बसंत ऋतु में इसके सफेद छोटे–छोटे फूल मंजुरी गुच्छों के रूप में खिलते हैं। नीम के फल 1.5 से 1.7 सेंटीमीटर लम्बे गोल अंडाकार होते हैं। नीम में पत्तियाँ पतझड़ के मौसम में गिर जाती हैं। बंसत में ताम्रलोहित पल्लव निकलते हैं। नीम के फल ग्रीष्म ऋतु के अंत में व वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में पकते हैं। सामान्यतया एक पूर्ण विकसित नीम से 37 से 100 किलोग्राम बीज प्राप्त होता है। एक किलोग्राम बीज में दानों की संख्या लगभग 2000 से 2900 तक पाई जाती है। नीम के 100 किलोग्राम पके फल में छिलका 23.8 प्रतिशत एवं गूदा 47.5 प्रतिशत प्राप्त होता है नीम की गिरी से 45 प्रतिशत तेल एवं 55 प्रतिशत खली प्राप्त होती है।

नीम का रसायनिक विवरण

नीम में एजोडिरेक्टीन नामक रसायन पाया जाता है। इस रसायन में कीटनाशक व कवकनाशक गुण होते हैं। इसी का प्रयोग करके बाजार में अनेक कीटनाशक दवाईयां उपलब्ध हैं। नीम वृक्ष के उत्पाद का रसायनिक संगठन इस प्रकार है।

मानव स्वास्थ्य में नीम का उपयोग

ग्रामीण समाज के लोगों के दिन की शुरूआत नीम के दातुन से होती है। हमारे गाँवों में जब किसी को त्वचा सम्बंधी व्याधि होती है तो उसे नीम के पत्तों से स्नान कराते हैं अगर किसी को फोड़ा–फुन्सी या घाव हो जाते हैं तो नीम की छाल को घिसकर लगाते हैं। कटने–फटने पर नीम के पत्तों को पीसकर लगाया जाता है। अगर किसी के पेट में कृमि या कीड़े पड़ जाते हैं तो नीम का सेवन करते हैं।

कृषि में नीम का उपयोग

हमारी स्वदेशी कृषि तकनीक नीम आधारित है। फसलों को हानिकारक कीटों से बचाना हो या अनाज को भंडारित करना हो तो नीम का उपयोग सहायक होता है। कृषि के दृष्टिकोण से देखा जाए तो खेती बाड़ी, भंडारण एवं पशुपालन आदि में नीम का व्यापक उपयोग है। फसल सुरक्षा के दृष्टिकोण से कीटों में वृद्धि नियंत्रकों का नियंत्रण करने के लिए नीम का प्रयोग किया जाता है जैसे खाद्य अवरोधक के रूप में और अण्ड अवरोधक के रूप में। नीम के कारण हानिकारक कीटों में प्रजनन क्षमता अवरूद्ध हो जाती है। नीम के प्रभाव से व्यस्क कीट बंधन यानि नपुसंक हो जाते हैं। अतः उनमें वंश वृद्धि की क्षमता में कमी आ जाती है।

अन्य उपयोग

बक्से में रखे कपड़ों को हानिकारक कीटों से बचाने के लिए भी नीम के पत्तों का प्रयोग होता है। इसी वजह से हमारे आदि ग्रन्थों में नीम को लोक मंगलकारी एवं सर्वव्याधि निवारक की संज्ञा दी गई है। नीम एक जीवनोपयोगी वृक्ष

नीम वृक्ष के उत्पाद	निम्बार	निम्बीनीन	एजोडिरेक्टीन	निम्बोसिटेरोल	उड़नशील तेल	टैनिन
रासायनिक संगठन	0.04 %	0.001 %	0.4 %	0.03 %	0.02 %	6.00 %

है। ग्रामीण समाज में नीम का वृक्ष वायु को शुद्ध रखता है। हानिकारक कीटों एवं मच्छरों को दूर भगाता है क्योंकि यह औषधीय गुणों से परिपूर्ण है। नीम के सूखे पत्तों को जलाकर पशुशाला को मच्छर व कीट रोधी बनाया जाता है। घरों से मच्छर भगाने के लिए नीम के पत्ते जलाए जाते हैं। नीम के विभिन्न भागों से चर्म रोग, परजीवी रोग, गर्भ निरोधक, मलेरिया, चेचक व दमा आदि की दवा तथा सर्प, बिच्छू आदि के विषैले प्रभाव को कम करने की दवा बनाई जाती है। नीम के तेल एवं खली का प्रयोग कीटनाशक एवं मृदाशोधक जैविक खाद के रूप में किया जाता है।

एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन में उपयोग

आई.पी.एम. यानि एकीकृत नाशीजीव प्रंबधन में नीम का बहुत योगदान है। एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन में यह एक वरदान है क्योंकि इसमें इसका प्रयोग सर्वथा निरापद एवं अत्यंत प्रभावी है।

पोषक तत्व के रूप में उपयोग

नीम की खली में 5 से 8 प्रतिशत तक नाइट्रोजन तथा अधिक मात्रा में पोटाशियम मिलता है जिसका उपयोग मृदा सुधारक के रूप में किया जाता है। इससे नाइट्रोजन का सूक्ष्मीकरण होता है। फलस्वरूप नाइट्रोजन गैस के रूप में उपस्थित रोग जनित कीटाणु नष्ट हो जाते हैं तथा कार्बनिक तत्वों की बढ़ोत्तरी के कारण मृदा शोधक सूक्ष्म जीवाणुओं में सक्रियता आ जाती है।

नीम का उर्वरक, कीटनाशी एवं रोगनाशी आदि के रूप में विभिन्न उपयोग

1. उर्वरक के रूप में खली का प्रयोग करने से भूमि के अंदर पाए जाने वाले सभी प्रकार के कीट जैसे दीमक, कटुआ, सफेद गिडार, आम की गुजिया, टिड्डे आदि नष्ट हो जाते हैं । कीटों से फसलों की सुरक्षा भी होती है।

2. नीम की पत्ती 5 किलोग्राम 10 लीटर पानी में तब तक उबाले जब तक यह ढाई लीटर ना रह जाए। अब इस ढाई लीटर नीम युक्त पानी से 100 लीटर पानी मिलाकर प्रति एकड़ धान की फसल पर छिड़काव करें। इस छिड़काव से धान का गंधी कीट, हरा फुदका, भूरा फुदका एवं रस चुसने वाले कीटों से धान की फसल को बचाया जा सकता है। नीम के इसी

घोल से बैंगन के तना छेदक एवं फल छेदक कीट से बचाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त टमाटर में फली छेदक कीट का भी नियंत्रण किया जाता है। नीम की पत्तियों के अर्क से कपास, सब्जी तथा दहलनी बीजों का उपचार करने से बीज जनित रोगों का नियंत्रण होता है।

3. नीम का तेल दुर्गन्ध युक्त एवं उसमें कडुवापन होने के कारण सभी फसलों एवं पौधों की पत्ती, फूल अथवा फल पर कीड़ों को नियंत्रित करता है। नीम का तेल 1–2 लीटर की मात्रा प्रति एकड़ छिड़काव करने से काटने, चबाने एवं रस चूसने वाले कीड़े नष्ट हो जाते हैं तथा कीटों के अंडों से बच्चे भी नहीं निकल पाते।

4. नीम तेल के 2 प्रतिशत घोल का प्रयोग करके चूर्णिल आसिता यानि पाउडरी मिल्ड्यू रोग का नियंत्रण कुछ हद तक किया जा सकता है। नीम के 0.5 प्रतिशत घोल का कद्दूवर्गीय फसलों में 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें। इससे कद्दूवर्गीय फसलों में रोग नियंत्रण के साथ–साथ 50 से 70 प्रतिशत तक फसल वृद्धि भी होती है।

5. ढाई कि.ग्रा. नीम का बुरादा ढाई से तीन कि.ग्रा. लहसुन तथा 250 से 300 ग्राम खाने वाला तम्बाकू इन तीनों का पेस्ट बना लें। इस पेस्ट में दो लीटर गोमूत्र या मिट्टी का तेल मिलाकर धान या गेहूँ की फसल पर छिड़काव करने से सभी हानिकारक कीट व रोगों का प्रभावी ढंग से नियंत्रण होता है।

6. नीम की पांच किलोग्राम निम्बोली रात भर के लिए शाम को भिगो दें। इस निम्बोली को सुबह उबाल लें

और गाढ़ा पेस्ट बना लें। इस पेस्ट में 100 लीटर पानी मिलाकर घोल बना लें और प्रति एकड़ की दर से फसलों पर छिड़काव करें। सभी फसल, सब्जी तथा बागों में कीट नियंत्रण के लिए यह एक उपयुक्त कीटनाशी है।

7. नीम के 5 किलोग्राम सूखे बीजों को साफ करके उसके छिलके को हटाकर नीम की गिरी निकाल लें। नीम की गिरी का पाउडर बना लें। इस पाउडर को दस लीटर पानी में मिलाकर रात भर रखें। इस घोल को सुबह किसी लकड़ी के डंडे से हिलाकर मिलाएं तथा महीन कपड़े से छान लें। इस घोल में 100 ग्राम कपड़ा धोने वाला पाउडर मिलाकर फिर 150 से 200 लीटर पानी में मिलाएं। यह एक उपयुक्त कीटनाशी है जो एक एकड़ फसल में छिड़काव हेतु पर्याप्त है।

8. नीम की 10 किलोग्राम खली ले लें। इसे रात भर के लिए पानी में भिगो दें। सुबह इस घोल में 100 लीटर पानी और 100 ग्राम कपड़ा धोने वाला पाउडर मिलाकर फसलों पर छिड़काव करें। एक एकड़ की फसल के लिए यह कीटनाशी पर्याप्त है।

9. नीम का एक लीटर तेल ले लें। इसमें 100 ग्राम कपड़ा धोने वाला पाउडर मिलाएं तथा 100 लीटर पानी में घोलकर फसल पर छिड़काव करें। एक एकड़ क्षेत्रफल की फसल के लिए यह कीटनाशी पर्याप्त है।

10. अन्न भंडारण के लिए प्रयोग किए जाने वाले जूट के बोरों को 10 प्रतिशत नीम गिरी के घोल में 15 मिनट तक डुबोएं और उन्हें छाया में अच्छी तरह से सुखाकर अन्न भंडारण करें तथा बचे घोल का अन्न भंडारण वाले स्थान पर छिड़काव करें। इससे भंडारित अनाज कीटों से सुरक्षित रहेगा।

11. पादप विषाणु सूत्रकृमि एवं कवक के दुष्प्रभाव से फसल को बचाया जा सकता है। नीम के प्रयोग से गंधी कीट, तना छेदक, जैसिड्स, फुदके, हेलियोथिस, सफेद मक्खी, माहू, फलीबेधक, तम्बाकू सुंडी आदि कीटों का नियंत्रण किया जा सकता है।

नीम के विभिन्न उत्पादों के उपयोग में सावधानियाँ

- नीमयुक्त कीटनाशी का छिड़काव प्रातःकाल या देर शाम को करने से अच्छे परिणाम मिलते हैं। सर्दियों में 10 दिन बाद तथा वर्षा ऋतु में 2–3 दिनों में छिड़काव की सलाह दी जाती है।

- छिड़काव इस प्रकार करें कि पत्तियों के निचले सिरों पर भी नीम कीटनाशी पहुँचे। अधिक गाढ़े घोल की अपेक्षा हल्के घोल का कम दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

उपसंहार

नीम वास्तव में औषधीय दृष्टिकोण एवं व्यापारिक दृष्टिकोण से वातावरण के परिष्करण के लिए फसलों को रोग कीटों से बचाने के लिए हर प्रकार से मानव जीवन के हितार्थ सर्वथा लाभकारी है। आज आवश्यकता इस बात की है कि अधिक से अधिक नीम के वृक्षों का रोपण करके नीम के गुणों का अधिक से अधिक फायदा उठाकर, पर्यावरण सुरक्षित रखकर, पौधों को रोगों एवं कीटों से बचाया जाए तथा इसके विविध उपयोग का लाभ उठाया जाए।

धान की पराली जलाने से होने वाले नुकसान तथा उसके वैकल्पिक उपयोग

जीतेन्द्र सिंह, सचिन पंवार, सचिन देशवाल, अशोक कुमार, कर्णम वेंकटेश एवं माम्रुथा एच.एम.

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

अधिकृत रिपोर्ट के अनुसार देश भर में हर वर्ष 50 करोड़ टन से अधिक पराली निकलती है, जिसमें से 36 करोड़ टन का उपयोग पशु चारे के रूप में तथा शेष 14 करोड़ टन पराली खेत में जला दी जाती है। पंजाब व हरियाणा में क्रमशः 19–20 व 12–15 मिलियन टन पराली की पैदावार होती है जिसमें से पंजाब व हरियाणा में क्रमशः 12 व 7–8 मिलियन टन पराली को जला दिया जाता है।

धान की पराली जलाने से होने वाले नुकसान

- एक टन पराली जलाने से हवा में 3 कि.ग्रा. कार्बन कण, 513 कि.ग्रा. कार्बनडाई–ऑक्साइड, 92 कि.ग्रा. कार्बनमोनो– ऑक्साइड, 3.83 कि.ग्रा. नाइट्रस–ऑक्साइड, 2–7 कि.ग्रा. मीथेन, 250 कि.ग्रा. राख घुल जाती है।

- धान की पराली जलाने से पर्यावरण प्रदूषित होता है,

मुख्यतः वायु अधिक प्रदूषित होती है। वायु में उपस्थित धुएँ से आंखों में जलन व सांस लेने में दिक्कत होती है। प्रदूषित कणों के कारण खांसी, अस्थमा जैसी बीमारियों को बढ़ावा मिलता है। प्रदूषित वायु के कारण फेफड़ों में सूजन, संक्रमण, निमोनिया व दिल की बिमारियों सहित अन्य कई बिमारियों का खतरा बढ़ जाता है।

• किसानों के पराली जलाने से भूमि की उपजाऊ क्षमता लगातार घट रही है। इस कारण भूमि में 80 प्रतिशत तक नाईट्रोजन, सल्फर और 20 प्रतिशत तक अन्य पोषक तत्त्वों में कमी आई है। मित्र कीट नष्ट होने से शत्रु कीटों का प्रकोप बढ़ा है जिससे फसलों में विभिन्न प्रकार की नई बिमारियां उत्पन्न हो रही हैं। मिट्टी की ऊपरी परत कड़ी होने से जल धारण क्षमता में कमी आ रही है।

• एक टन पराली जलाने से 5.5 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 2.3 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 1.2 कि.ग्रा. सल्फर जैसे मिट्टी के पोषक तत्त्व नष्ट हो जाते हैं।

• हरियाणा, पंजाब और उत्तर प्रदेश में बड़ी मात्रा में पराली जलाने से दिल्ली व उसके आस–पास के क्षेत्र में बहुत धुंध छा जाती है जो कि कोहरे का रूप ले लेती है जिससे यातायात प्रभावित होता है तथा सड़क दुर्घटनाएं बढ़ जाती हैं।

धान की पराली न जलाने के वैकल्पिक स्त्रोत

• पराली के छोटे–छोटे गोले बनाकर, ईंट के भट्ठों तथा बिजली पैदा करने वाले प्लांट को बेचा जा सकता है जिससे कोयले की बचत होगी तथा किसान 1000–1500 रूपए प्रति टन के हिसाब से कमा सकते हैं।

• पराली से बॉयोगैस बनायी जा सकती है जो कि खाना बनाने के काम आ सकती है। पराली से जैविक खाद भी बनाई जा सकती है, यह न सिर्फ पैदावार को बढ़ाता है, बल्कि उर्वरक पर होने वाले खर्च को भी कम करता है।

• धान की पराली का उपयोग पशु चारे, मशरूम की खेती, कागज तथा गत्ता बनाने में, पैकेजिंग, सेनेटरी उद्योग आदि में किया जा सकता है।

• पराली का उपयोग हल्दी, प्याज, लहसुन, मिर्च, चुकन्दर, शलगम, बैंगन, भिन्डी सहित अन्य सब्जियों में किया जा सकता है। मेंड़ों पर इन सब्जियों के बीज बोने के बाद पराली को मल्चिंग या पलवार कर (पराली को कुतर कर) ढक देने से पौधों को प्राकृतिक खाद मिलती है। ढके हुए हिस्से पर खरपतवार नहीं उगते हैं।

• यदि हैप्पी सीडर की मदद से पराली वाले खेत में ही गेहूँ की सीधी बिजाई कर दी जाए तो पराली गेहूँ में खाद का काम करती है जिससे जमीन में पोषक तत्त्वों की मात्रा बढ़ेगी साथ ही मजदूरी की लागत भी कम आएगी तथा फसल लगभग 20 दिन अगेती भी हो जाती है।

• भारत की पहली 2जी (द्वितीय पीढ़ी) एथेनॉल बॉयोरिफाइनरी दिसम्बर 2016 में पंजाब के बठिंडा में खोली गई। बठिंडा के किसान पराली बेचकर प्रत्येक वर्ष लगभग 20 करोड़ से अधिक रूपये कमा सकते हैं। भारत सरकार द्वारा देश के 11 राज्यों में ऐसी 12 एथेनॉल बॉयोरिफाइनरियों को स्थापित किया जायेगा। पेट्रोल में मिलाने के लिए 10 प्रतिशत एथेनॉल इन रिफाइनरियों में तैयार किया जाएगा।

पराली को जलाने से रोकने के लिए सरकार द्वारा उठाए गए कदम

• पराली खेत में न जलाई जाए इसके लिए एन.जी.टी. अक्तूबर 2015 के आदेशानुसार कृषि अपशिष्ट जलाने पर जुर्माना लगाया जाएगा। इसके तहत 2 एकड़ से कम खेत पर 2500 रूपये, 2–5 एकड़ खेत पर 5000 रूपये तथा 5 एकड़ से अधिक पर 15000 रूपये जुर्माना लगाया जाएगा।

• पराली न जलाने पर पंजाब सरकार की ओर से गाँव स्तर पर 1 लाख रूपए व जिला स्तर पर एक करोड़ रूपये का विशेष अनुदान देने की योजना है।

• सरकारी स्तर पर हैप्पी सीडर, जीरो टिलेज मशीन, रोटावेटर जैसे कृषि यन्त्रों पर अनुदान को बढ़ाया जाए। पंजाब की तरह हर राज्य में प्रोत्साहन राशि शुरू की जाए। बॉयोमास पावर प्लांट लगाए जाएं ताकि करीब 44 लाख टन कृषि अपशिष्ट की खपत हो सके।

राज्य सरकार पराली से जैविक खाद बनाने के संयत्र जगह जगह लगाए। हालांकि कृषि वैज्ञानिक पराली को कुतरकर पराली को जैविक खाद बनाने की सलाह देते हैं। किन्तु यह विधि बहुत महंगी है

गेहूँ का पीला रतुआ रोगः निगरानी एवं प्रबंधन

पंकज कुमार सिंह, महेन्द्र कुमार, साहिल परूथी एवं डी.पी. सिंह
भा.कृ.अनु.प.– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

क्षेत्रफल एवं उत्पादन की दृष्टि से गेहूँ (ट्रिटिकम एस्टीवम एल.) रबी की सबसे महत्त्वपूर्ण फसल है। देश में गेहूँ का उत्पादन लगभग 30 मिलियन हैक्टर भूमि में किया जाता है। विश्व में भारत की जनसंख्या का दूसरा स्थान होने के कारण देश में गेहूँ के उत्पादन की बहुत आवश्यकता है। अच्छे उत्पादन के लिए गेहूँ की फसल में स्वास्थ्य की देखभाल जरूरी है। उत्तर भारत में पीला रतुआ गेहूँ की एक प्रमुख बीमारी है। इसलिए इसकी रोकथाम अधिक उत्पादन के लिए आवश्यक है। पीला रतुआ एक ऐसी बीमारी है जो फसल को 50 से 100 फीसदी तक बर्बाद कर सकती है। यह रोग ठंडे प्रदेशों में पाया जाता है, जिनमें जम्मू एवं कश्मीर, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान राज्य प्रमुख हैं। यह रोग उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र में पूरा साल जीवित रहता है तथा उपयुक्त समय पर उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र में फैलता है। इसका प्रकोप दिसम्बर से फरवरी मास तक अधिक रहता है। पीला रतुआ एक फफूंद है जो हवा के जरिए फैलता है। यह रोग लाखों रोगाणु पैदा करता है तथा एक मौसम में कई बार अपना रोग–चक्र बनाता है जो कि तेजी से गेहूँ की फसल को चपेट में लाने के लिए सक्षम होता है।

रोग के लक्षण

इस रोग में गेहूँ के पौधों की पत्तियों पर पीले रंग की धारियां पड़ जाती हैं। पीला रतुआ बीमारी में गेहूँ के पत्तों पर पीले रंग का पाउडर बनता है, जिसे हाथ से छूने पर हाथ पीला हो जाता है। पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीले रंग की धारी दिखाई देती है, जो धीरे–धीरे सारी पत्तियों को पीला कर देती हैं। ऐसे खेतों में जाने से कपड़ों पर भी पीला रंग लग जाता है। जब तापमान 23 डिग्री सेन्टीग्रेड से ऊपर चला जाता है तो पत्तियों की निचली सतह पर धारियों का रंग काला पड़ जाता है।

वर्तमान फसल में पीला रतुआ रोग आने की सम्भावना

किसान बड़े पैमाने पर गेहूँ की अगेती व पछेती फसल की बीजाई करते हैं। इस वर्ष कुछ क्षेत्रों में बरसात न होने और ठंड कम पड़ने के कारण, गेहूँ की फसल पर पीला रतुआ अपेक्षाकृत बहुत कम देखा गया है तथा दिसम्बर 2016 में केवल पंजाब के रोपड़ एवं गुरूदासपुर जिलों में दो खेतों में पाया गया है। इस वर्ष अभी तक अन्य राज्यों में नहीं देखा गया है। इसलिए फसल पर (दिसम्बर के अंतिम सप्ताह तक) प्रोपीकोनाजोल (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव केवल उन्हीं खेतों में करें जहाँ पीला रतुआ दिखाई दे।

रसायनिक उपचार

गेहूँ की फसल में पीला रतुआ रोग के लक्षण दिखाई दें तो किसान तुरंत प्रोपीकोनाजोल 25 ई.सी. नामक दवा की 200 मिली लीटर मात्रा को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

अन्य उपचार

रतुआ रोधी किस्मों का प्रयोग

गेहूँ में लगने वाले पीला रतुआ रोग से बचाव का यह सबसे आसान और प्रभावी उपाय है। नई विकसित किस्में रोगरोधी होती हैं तथा इनका प्रयोग करने से रोग से बचाव होता है।

सर्वेक्षण एवं निगरानी

पीला रतुआ से बचाव के लिए समय–समय पर सर्वेक्षण एवं निगरानी करते रहना चाहिए।

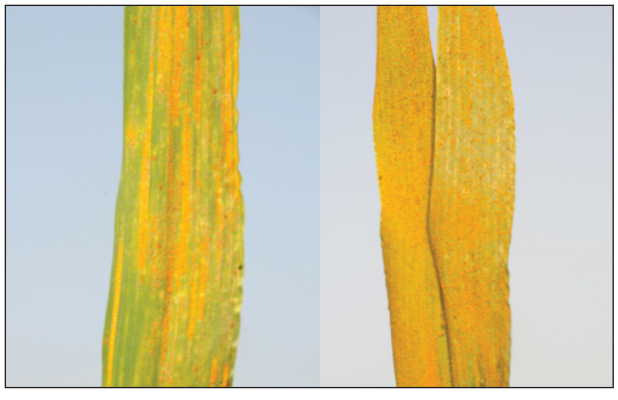

परामर्श एवं सलाह

पीला रतुआ रोग का संदेह होने पर किसानों को कृषि वैज्ञानिक या पौध रोग विशेषज्ञों से विचार–विमर्श कर उपचार करना चाहिए।

उन्नत एवं लाभदायक कृषि के लिए मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना

सुरेन्द्र सिंह, अजित सिंह खरब, विष्णु कुमार गोयल एवं योगेश कुमार

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से खेती पर निर्भर है तथा देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में मुख्य भूमिका है। वर्ष 2015–16 के अनुसार देश के कुल सकल घरेलू उत्पाद का 14.13 प्रतिशत कृषि और सम्बन्धित गतिविधियों से ही प्राप्त होता है। विश्व में देश की दो प्रमुख खाद्यान्न फसलें गेहूँ एवं धान का उत्पादन में दूसरा स्थान है। जबकि देश की कृषि योग्य भूमि लगातार कम होने के साथ–साथ इसकी उर्वराशक्ति भी कम होती जा रही है, तथा देश की बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करना तथा कम लागत में अधिकतम उत्पादन कर किसानों की आमदनी बढ़ाकर देश को प्रगतिशील बनाना कृषि वैज्ञानिकों का लक्ष्य है।

यह अतुलनीय सत्य है कि खेती सीधे तौर पर मिट्टी से जुड़ी है और मिट्टी पर ही किसानों की उन्नति निर्भर करती है। कहते हैं 'स्वस्थ धरा, खेत हरा'। देश के कृषि विशेषज्ञ समूह ने यह पाया कि किसानों में जानकारी के अभाव के कारण खेती में रासायनिक उर्वरकों व कृषि रसायनों का असंतुलित मात्रा में प्रयोग किया जा रहा है इससे मिट्टी की सेहत लगातार बिगड़ती जा रही है तथा किसानों के फसल उत्पादन व पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इसी सोच को लेकर ही भारत सरकार ने किसानों के कल्याण और फसल की उच्च उत्पादकता एवं गुणवत्ता पर ध्यान केन्द्रित करते हुए फरवरी 2015 में 'मृदा स्वास्थ्य कार्ड' (सॉयल हेल्थ कार्ड) योजना का शुभारम्भ किया।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड का इतिहास

वर्ष 2003–04 में वैज्ञानिक उपायों की पहल व मृदा स्वास्थ्य की देखभाल के लिए सर्वप्रथम देश के गुजरात राज्य में किसानों को सॉयल हेल्थ कार्ड उपलब्ध कराए गए। इस दिशा में राज्य में लगभग 100 से ज्यादा मृदा परीक्षण प्रयोगशालाएं स्थापित की गईं तथा राज्य में इस योजना के परिणाम काफी संतोषजनक रहे हैं।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड की जरूरत क्यों पड़ी ?

कृषि में मृदा स्वास्थ्य की स्थिति व खाद की भूमिका के बारे में किसानों को जागरूक कर देश के उत्तरी एवं पूर्वी भू–भाग में खाद्यान्न फसलों से अधिकतम उत्पादन लेने में मदद मिलेगी तथा देश के मध्य व प्रायद्वीपीय भागों में फसल उत्पादन में गिरावट से निपटने में सहायता मिलेगी। जिससे पंजाब एवं हरियाणा जैसे राज्यों पर कृषि उत्पादन में दबाव कम होगा।

उददेश्य

1. फसल उत्पादन में उर्वरकों व अन्य पोषक तत्वों के लिए मिट्टी में उपलब्ध पोषक तत्वों की स्थिति की सही जानकारी हेतु।

2. अम्लीय एवं उसर भूमि की स्थिति की जानकारी एवं इसके सुधार हेतु।

3. क्षमता निर्माण के द्वारा मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं के कार्यों को और अधिक मजबूत बनाना।

4. मानक प्रक्रियाओं के साथ मिट्टी की उर्वरता से सम्बंधित परेशानियों का निदान करने के लिए।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड का महत्त्व

सॉयल हेल्थ कार्ड बनाने के लिए किसान के व्यक्तिगत फार्म से खसरा नम्बर व भू–स्थिति (जी. पी. एस.) के अनुसार मिट्टी के नमूनों को एकत्रित किया जाता हैं। फिर इन नमूनों का केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा देश के विभिन्न क्षेत्रों में स्थापित मिट्टी जाँच प्रयोगशालाओं में परीक्षण किया जाता है तथा विशेषज्ञों द्वारा मिट्टी में उपलब्ध प्राथमिक पोषक तत्वों (नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश), द्वितीय पोषक तत्व (कैल्शियम, मैग्नीशियम एवं सल्फर) व सूक्ष्म पोषक तत्वों (जिंक, बोरोन, आयरन, मैंग्नीज, कॉपर, कोबाल्ट, मालिब्डिनम एवं क्लोरीन आदि) की ताकत एवं कमजोरी का विश्लेषण कर परिणामों का सुझाव सॉयल हेल्थ कार्ड पर दर्शाया जाता है। इस कार्ड पर उपलब्ध सुझाव/जानकारी के आधार पर किसान द्वारा कम लागत में अपनी फसलों से अधिक उत्पादन के लिए अपेक्षित विभिन्न पोषक तत्वों और उर्वरकों का फसलवार विवेकपूर्ण उपयोग किया जा सकता है तथा अपने खेत की मिट्टी की स्थिति को आसानी से पहचाना जा सकता है। किसान मिट्टी एवं फसल की समुचित जानकारी के अभाव के कारण फसलों में उर्वरकों तथा प्राथमिक पोषक तत्वों का अनुचित तरीके से प्रयोग कर रहे हैं व सूक्ष्म पोषक तत्वों की अनदेखी की जा रही है। जिसके कारण मिट्टी की उर्वरा शक्ति व उत्पाद की गुणवत्ता में गिरावट के साथ–साथ पर्यावरण पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इसके अतिरिक्त विशेषज्ञों द्वारा किसानों को यह भी सलाह दी जाती है कि फसलों में कार्बनिक (कम्पोस्ट व गोबर की खाद) व जैविक खादों के प्रयोग को बढ़ाने के साथ–साथ संरक्षित खेती तथा फसल विविधिकरण को भी अपनाने पर जोर देना चाहिए। जिससे भूमि की उपजाऊ शक्ति बनी रहती है। यह वास्तविकता है कि कृषि उत्पादन के लिए मृदा एक महत्त्वपूर्ण घटक है। इसकी गुणवत्ता में सुधार करके ही फसलों से अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। जिससे किसानों की आमदनी को बढ़ाया जा सकता है। यह योजना किसानों की प्रति इकाई अपनी उत्पादकता बढ़ाने, मिट्टी की उर्वराशक्ति को बनाए रखने व बेहतर आय सुनिश्चित करने का एक सुनहरा अवसर प्रदान करती है।

केन्द्र सरकार इस योजना के तहत सन् 2017 तक सभी किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड उपलब्ध कराने की योजना पर कार्य कर रही है। इस योजना के माध्यम से किसानों को मृदा के स्वास्थ्य को बेहतर करने में मदद मिलेगी एवं देश एक स्वस्थ फसल और स्वस्थ भविष्य की ओर अग्रसर होगा जिससे कृषि की उन्नति के साथ–साथ देश की भी उन्नति होगी।

चुनौतियाँ

1 इस योजना के अन्तर्गत मृदा स्वास्थ्य कार्ड बनाने की प्रक्रिया को प्रत्येक तीन साल में दोहराया जाना चाहिए। क्योंकि मृदा स्वास्थ्य एक प्रगतिशील पैरामीटर है तथा मृदा स्वास्थ्य कार्ड किसानों को केवल सलाहकार के तौर पर उपलब्ध कराना पर्याप्त नहीं है बल्कि इसके अनुरूप संतुलित उर्वरकों एवं आवश्यक पोषक तत्वों के उपयोग को अमल में लाने का लक्ष्य भी एक चुनौती हो सकता है।

2 इस कार्य को दक्षतापूर्ण एवं निरंतर प्रगतिशील बनाने के लिए उन्नयन मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं को बढ़ाकर कुशल एवं प्रशिक्षित स्टाफ तथा विस्तार कार्यकर्ताओं की उपलब्धता को सुनिश्चित करना।

3 इस योजना के अन्तर्गत छोटी जोत के ज्यादातर किसानों तक पहुँचना भी एक चुनौती हो सकता है।

4 फसल बिजाई के समय उर्वरकों एवं आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता सुनिश्चित करना।

5 मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं का किसानों की पहुँच से दूर होना।

तालिका : कृषि मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा अभी तक जारी किए गए मृदा स्वास्थ्य कार्ड की स्थिति

क्रम संख्या		कुल संख्या	दिनांक
मृदा स्वास्थ्य कार्ड के लिए मृदा नमूनों का एकत्रीकरण एवं परीक्षण			
1	मृदा नमूनों का लक्ष्य	25354394	13/12/2016 तक
2	लिए गए मृदा नमूने	22508964	13/12/2016 तक
3	मृदा नमूनों का परीक्षण किया गया	14930891	13/12/2016 तक
मृदा स्वास्थ्य कार्ड की छपाई व वितरण की स्थिति			
1	मृदा स्वास्थ्य कार्ड का लक्ष्य	13,99,96178	13/12/2016 तक
2	मृदा स्वास्थ्य कार्ड की छपाई	4,11,85,136	13/12/2016 तक
3	मृदा स्वास्थ्य कार्ड का वितरण	4,05,54,602	13/12/2016 तक

(स्रोतः www.soilhealth.dac.gov.in)

मानव जीवन के लिए सुरक्षित एवं पौष्टिक आहार एक अहम मुद्दा

काशीनाथ तिवारी, गरिमा सिंगरोहा, सतीश कुमार, विकास गुप्ता एवं चन्द्र नाथ मिश्रा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

खाद्य सुरक्षा मानव जीवन के लिए आवश्यक है। संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार सतत जनसंख्या वृद्धि दर एवं औद्योगिकीकरण की वजह से घटती हुई कृषि भूमि और अन्य प्राकृतिक संसाधनों में गिरावट प्रमुख कृषि फसलों के उत्पादन में स्थिरता, बढ़ती हुई कुपोषणता एवं प्रतिदिन बढ़ती हुई नई जरूरतों को देखते हुए 21वीं शताब्दी में खाद्य सुरक्षा और पोषण सुरक्षा बनाए रखना एक महत्वपूर्ण चुनौती है। विश्व स्तर पर गरीबी उन्मूलन, खाद्य सुरक्षा एवं पोषण सुरक्षा के उद्देश्यों की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि इन दीर्घकालीन चुनौतियों से कैसे निपटा जाए। क्या हम भविष्य में विश्व के 9 बिलियन लोगों का स्थाई रूप से पेट भरने में सक्षम हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के आंकड़ों के अनुसार विश्व में लगभग 800 मिलियन लोग भुखमरी के शिकार हैं। विकासशील देशों में प्रतिवर्ष गरीबी रेखा के नीचे रहने वाली जनसंख्या में नाटकीय रूप से बढ़ोत्तरी होती जा रही है। पिछले कुछ दशकों के दौरान कृषि में प्रथम संतति विकास के फलस्वरूप 'हरित क्रांति' का सूत्रपात हो सका। इस अवधि के दौरान कृषि उत्पादों की मात्रा व गुणवत्ता में अभूतपूर्व वृद्धि हुई, परन्तु इस सफलता के बावजूद भारतीय किसानों को उनके उत्पाद का अच्छा मूल्य न मिलने के कारण आज कृषि को छोड़ अन्य क्षेत्रों में रोजगार तलाश रहे हैं जिसकी वजह से भरपूर अनाज भण्डार के बावजूद भविष्य में खाद्य सुरक्षा एक प्रमुख मुद्दा है। यदि अभी से इस मुद्दे पर गम्भीरता नहीं दिखाई गई तो भविष्य में स्थिति और अधिक गम्भीर हो सकती है। विश्व भर के खाद्यान्न व्यापार में असंतुलन पैदा होने, पशुओं के लिए पानी, पशुशाला एवं दुधारू पशुओं में उर्जा सम्बंधित जरूरतों के बढ़ने व उनकी प्रजनन क्षमता में कमी एवं खाद्य और पोषण सुरक्षा पर समस्याओं की आशंका व्यक्त की जा रही है। जलवायु परिवर्तन और बदला हुआ मौसम भी कृषि उत्पादन को प्रभावित कर खाद्यान्न समस्या का मुख्य कारक बना हुआ है। बदलते मौसम की वजह से बेवक्त बारिश, सूखा एवं तापमान वृद्धि फसल उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। कृषि क्षेत्र में तीव्र वृद्धि न केवल आत्मनिर्भरता के लिए जरूरी है बल्कि लोगों को खाद्य और पोषण सुरक्षा को पूरा करने, ग्रामीण क्षेत्रों में आय व संपत्ति का सम्पूर्ण वितरण करने, गरीबी कम करने व साथ ही लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाने हेतु अति आवश्यक है। परन्तु इसके लिए हमारी मुख्य प्राथमिकताओं को वैज्ञानिक शोध, उपलब्ध संसाधनों तथा तकनीकियों को जोड़ना अति आवश्यक है। कृषि विकास के लिए फसल सुधार, जल व उर्वरकों का संतुलित उपयोग, रोग व कीट व्याधियों के लिए उचित रसायनों व उनका प्रभावी उपयोग फसल बचाव के लिए रसायन रहित प्रणालियों का विकास व प्रचलन एवं अत्यधिक टिकाऊ तकनीकियों द्वारा कृषि उत्पादन इत्यादि बहुत महत्वपूर्ण है। कृषि में संवृद्धि का अन्य क्षेत्रों पर भी विस्तृत प्रभाव पड़ता है। अपने उत्पादों का निर्यात कर हम विदेशी मुद्रा भी अर्जित करते हैं जिससे सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था व आबादी के सर्वांगीण विकास करने के साथ कृषि उत्पादन बढ़ाने, खाद्य सुरक्षा बनाए रखने हेतु जैव प्रौद्योगिकी, अभियांत्रिकी, इंफोर्मेटिक्स, नैनो तकनीक इत्यादि का अनुसंधान में समायोजन करके उपयोगी उत्पाद व प्रभावी तकनीकियां विकसित कर रहे हैं।

भारत में फिलहाल वैश्विक उत्पादन की दृष्टि से करीब 14 प्रतिशत गेहूँ, 21 प्रतिशत धान, 25 प्रतिशत दलहन, 10 प्रतिशत फल, 22 प्रतिशत गन्ना और 16 प्रतिशत दूध का उत्पादन हो रहा है। इन संसाधनों से देश की आबादी के साथ–साथ कृषि उत्पाद का निर्यात कर अन्य देशों की आबादी का भरण पोषण हो रहा है। कृषि के क्षेत्र में अनुसंधान एवं विकास पर किए गए निवेश से 48 प्रतिशत प्रतिफल मिल रहा है और इस क्षेत्र की ताकत का भारत को हाल के वैश्विक आर्थिक संकट के दौरान पता चला जिसमें भारत आरामदायक स्थिति में बना रहा। हमारे यहां कृषि भूमि का लगभग 50 फीसदी भाग सिंचित है।

शेष कृषि वर्षा जल व अन्य प्राकृतिक साधनों पर निर्भर करती है। लेकिन आगामी वर्षों में जलवायु परिवर्तन की वजह से सूखा, बेवक्त बारिश, बढ़ता तापमान इत्यादि कृषि उत्पाद को प्रभावित कर खाद्यान्न सुरक्षा के लिए चिंता का विषय बन सकते हैं।

खाद्य सुरक्षा की अवधारणा में हाल के वर्षों में काफी बदलाव आया है। भोजन की उपलब्धता एवं पोषण सुरक्षा के अच्छे उपायों का सत्तर के दशक में विचार किया गया। उन दिनों गरीबी उन्मूलन, भूख को मिटाने, आत्मनिर्भरता व विकास के लिए नीतियों को उच्च प्राथमिकता दी गई। भारत प्रति व्यक्ति कैलोरी युक्त भोजन में वृद्धि प्राप्त करने में सफल रहा। खाद्य उत्पादन में साल दर साल उतार–चढ़ाव का सामना करने के साथ क्षमता में सुधार हुआ। लेकिन पोषण असुरक्षा की समस्या का हल नहीं हो सका। कमजोर वर्ग की अधिकतर महिलाएं लोहा (आयरन) की कमी की समस्या से ग्रसित हैं। कुपोषण का स्तर चरम पर होने से खाद्य सुरक्षा की नई नीति भी बनाई गई लेकिन इनका कारगर समाधान कुछ हद तक तो सफल है लेकिन पूर्ण रूप से अमल नहीं हो पा रहा है। हिमालय के मैदानी तथा पहाड़ी क्षेत्रों में लोगों में विटामीन–ए की कमी से बच्चों तथा महिलाओं में रतौंधी जैसे रोग आम बात है। एक सर्वेक्षण के अनुसार देश में एनीमिया ग्रसित महिलाओं में 35 प्रतिशत गंभीर एनीमिया, 15 प्रतिशत मध्यम एनीमिया और 2 प्रतिशत एनीमिया से सम्बंधित रोगों से पीड़ित हैं। सच कहें तो गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों में पोषण के नजरिए से वांछनीय आहार का सवाल अभी भी एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इसके लिए पोषक तत्त्वों की कमी दूर करने के लिए प्रभावकारी नीति बनाने की आवश्यकता है।

औद्योगिक क्रांति और चहुमुखी विकास के इस युग में भी विश्व में लगभग 925 मिलियन लोग भुखमरी के शिकार हैं। विश्व के लगभग 1.4 मिलियन लोग 1.25 यू.एस. डालर प्रतिदिन से अपनी आजिविका चला रहे हैं। गरीब लोग अपनी आय का 50 से 80 प्रतिशत हिस्सा भोजन पर खर्च करते हैं। दुनिया के लगभग आधा बिलियन लघु और सीमान्त किसान समूचे विश्व की आबादी को भोजन मुहैया करा रहे हैं। भले ही आज हमारे पास भरपूर अन्न भंडार है लेकिन सन् 2050 तक विश्व की आबादी का पेट भरने के लिए हमें कृषि उत्पादन को आज के मुकाबले दोगुना करने की जरूरत पड़ेगी। जलवायु से प्रभावित होने की वजह से भविष्य में खाद्य सुरक्षा पर संकट के अंदेशों को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता।

मानव सभ्यता में मोटे अनाज के मामले में भूख को मिटाने और खाद्य सुरक्षा में गेहूँ की अहम भूमिका रही है। सम्पूर्ण कैलोरीयुक्त आहार और प्रोटीन का 20 प्रतिशत योगदान केवल गेहूँ से पूरा होता है। वर्तमान में 264 मिलियन टन खाद्यान्न उत्पादन को बढ़ाकर वर्ष 2025 तक 280 मिलियन टन करने की चुनौती है। भारत सरकार ने 11वीं पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन जैसे कार्यक्रमों की शुरूआत की जिनका मुख्य उद्देश्य कृषि क्षेत्र में विकास 4 प्रतिशत से अधिक हासिल करना है। हमारे देश में प्रति हैक्टर उत्पादकता विकसित देशों के मुकाबले एक तिहाई कम है। अब न सिर्फ उत्पादन बढ़ाने पर ध्यान देने की जरूरत है बल्कि किसानों को उनकी उपज का लाभकारी मूल्य दिलाना भी अति आवश्यक है। भारत सरकार द्वारा कृषि क्षेत्र में कई नवीन कार्यक्रम प्रमुखतः पूर्वी क्षेत्र में हरित क्रांति, 60 हजार दलहन ग्रामों का एकीकृत विकास, पाम ऑयल का प्रबंधन, सब्जी समूह सम्बंधी कार्यक्रम, पोषक अनाज कार्यक्रम, राष्ट्रीय प्रोटीन सम्पूर्ण मिशन, त्वरित चारा विकास कार्यक्रम इत्यादि को चलाया जा रहा है। देश की खाद्य सुरक्षा बनाए रखने में ये कदम महत्वपूर्ण साबित हो सकते हैं। इसके साथ यह भी जरूरी है कि किसानों को नई तकनीकी की जानकारी उपलब्ध कराई जाए साथ ही उन्नत किस्मों को जलवायु अनुकूलित बीज, उर्वरक, सस्ता ऋण और सिंचाई व्यवस्थाओं को दुरूस्त करने जैसे कदम उठाने की जरूरत है। किसानों को समय–2 पर उत्पाद के विपणन, मौसम सम्बंधित जानकारियां उपलब्ध कराना आवश्यक है जिससे समय रहते परिस्थितियों अनुसार किसान तैयारी कर सकें एवं खाद्य सुरक्षा से सम्बंधित समस्याओं का समाधान खोजकर उससे निपट सकें।

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल में दिनांक 16–17 दिसम्बर, 2016 के दौरान आयोजित संस्थान अनुसंधान समिति की बैठक में उपस्थित सभी वैज्ञानिकगण

लेखकों के लिए दिशा-निर्देश

गेहूँ एवं जौ संदेश में छपने हेतु लोकप्रिय लेख साफ-साफ हस्तलिखित या डबल स्पेसिंग में टाईप किए हुए (तालिका, आकृति, फोटोग्राफ सहित) दो पृष्ठों से अधिक नहीं होने चाहिएं। लेख में लेखक/लेखकों का पूरा नाम, पता व ई-मेल अवश्य लिखें। लेखकों से निवेदन है कि वे अपने लोकप्रिय लेख 31 मई तक पहले अंक (जनवरी-जून) के लिए एवं 30 नवम्बर तक दूसरे अंक (जुलाई-दिसम्बर) के लिए भेजें। कृपया एक लेख में 4-5 से अधिक लेखकों का नाम न दें।

सम्पादक मंडल

सत्यवीर सिंह, अनुज कुमार, अनिता मीणा, आर.के. गुप्ता एवं जी.पी. सिंह

तकनीकी सहायता : जे.के.पाण्डेय

छायाचित्र : राजेन्द्र कुमार शर्मा

बुक पोस्ट

छः माही मुद्रित सामग्री

सेवा में,

.....

.....

.....

.....

प्रेषक

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान
पोस्ट बॉक्स 158, अग्रसेन मार्ग,
करनाल - 132 001 (हरियाणा), भारत

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा प्रकाशित

किसान सहायता नम्बर (टोल फ्री) : 1800 180 1891

वेबसाइट : www.dwr.res.in

मुद्रित प्रति - 1000

DESIGN STUDIO 98120 53552